REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 10 | ISSUE - 10 | JULY - 2021

‘‘भारतीय संस्कृति में धर्म के विभिन्न आयाम‘‘

मदन मोहन मालवीय[1] , डॉ. मनोज कुमार[2]
[1]पी.जी. कॉलेज, भाटपार रानी,देवरिया, उ.प्र.
[2]एशोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष (दर्शन शास्त्र विभाग)

मानव जीवन में धर्म का एक महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि यह मानव की एक सार्वभौम अपरिहार्य भावना है। धर्म के सहारे मनुष्य अपने कल्याण एवं श्रेय की ओर अग्रसर होता है। वैशेषिक दर्शन में धर्म की परिभाषा करते हुए कहा गया है, कि जिससे अभ्युदय तथा मोक्ष की सिद्धि होती है, उसे धर्म कहते है –यतो म्युदयनिः श्रेयस सिद्धि : स धर्मः इसे यों कह सकते हैं कि धर्म मनुष्यता की कुंजी है। मनुष्यता आचार–विचार विषयक कतिपय आदर्शों और पद्धतियों का समन्वय है। धर्म उनके स्वीकार्य की प्रेरणा है। मनुष्य को पशु की श्रेणी से उन्नत कर जगत का सर्वोत्तम प्राणि बनाने का श्रेय और विशेषकर साधना की दृष्टि से मनुष्य का हितैषी रहा है। उसके लिए सन्मार्ग का नियामक रहा है। यह मनुष्यता का व्यक्तिगत एवं समष्टिगत दोनों प्रकार के कल्याण की अपार सामर्थ्य रखता है। इसके सहारे व्यक्ति साधना के क्रमिक सोपानों पर आरूढ़ होते हुए निर्वाण–पद की प्राप्ति में भी सफल हो जाता है। यह आत्म–विकास का चरम स्थल है। इस आत्म–कल्याण के अतिरिक्त वह व्यक्ति को पर कल्याण की प्रभावी सीख भी देता है। उसे सबके लिए जीना सिखाता है। भारतीय दृष्टिकोण में तो धर्म का अलग ही स्थान व महत्ता है। भारत को धर्म प्राण देश कहा जाता है। भारत का सम्पूर्ण अस्तित्व धर्म के अस्तित्व पर आधारित है। इस दृष्टि से भारत में धर्म की अपनी विशेष परिकल्पना एवं परम्परा है। भारतीय धर्म चिन्तकों ने समस्त चराचर चेतन एवं जड़ जितने भी पदार्थ हैं, उन सबका अस्तित्व धर्म के अस्तित्व पर आधारित माना है। संसार में प्रत्येक पदार्थ की जो आतंरिक विनायक वृति है, वही उसका धर्म है। प्रत्येक पदार्थ जिस वृति पर आधारित होता है, वही उस पदार्थ का धर्म है। धर्म की वृद्धि से प्रत्येक पदार्थ का संवर्द्धन होता है। इसके विपरित धर्म की न्यूनता से प्रत्येक पदार्थ का ह्रास होता है।

इस प्रकार ‘धर्म’ शब्द एक विस्तृत विचार एवं अर्थ वाला शब्द है इसे सीमांकित करना दुष्कर है। परन्तु इतनी बात अवश्य है कि धर्म का संबंध मानव जीवन से है। जब से मनुष्य इस धरती पर आया है तब से यह जाने–अनजाने रूप में उसके साथ रहा है। यह बात मानी जा सकती है कि मनुष्य में धर्म का विचार उसके धर्म–बोध के साथ आया है। जैसे–जैसे मनुष्य सुंसंस्कृत होता गया वैसे–वैसे धर्म का विचार उसके मस्तिष्क में आता गया। यह बात हम भलीभाँति जानते हैं कि मनुष्य पहले जंगली था और धीरे–धीरे वह विकसित होकर एक सभ्य व सुसंस्कृत मानव बना। इसी क्रम में मनुष्य जगलीपन से हटता गया एवं धर्म से जुटता गया।

धर्म चेतना की पराकाष्ठा है। भारत में धर्म की परिभाषा है–चिरंतन सत्य। जहाँ दूसरे धर्मों का मूल्य केवल शांति है वहीं भारतीय धर्म में सच्चिदानंद की कल्पना है। यहाँ धर्म का मूल्य है– सबसे प्रेम व सबका कल्याण। यतोम्युदय निःश्रेयस सिद्धिः। इसकी आत्मा आचार है। आचारो धर्मः। जहाँ दूसरे धर्म सीमित भौतिकता से सुखों से जुड़े हैं, वही भारतीय धर्म सार्वभौमिकता एवं आध्यात्मिकता से जुड़ा है। यहाँ किसी सम्प्रदाय को

मानने वाला या न मानने वाला सभी इसके अंग हैं। यहाँ धर्म के नाम पर कभी किसी के ऊपर कुछ भी थोपा नहीं गया। सबके लिए सभी द्वार खुले हैं। यही कारण है कि यहाँ धर्म की विभिन्न धाराएं विकसित होकर स्वतः अंत में मूलधारा में मिलती गयी है।

सन् 1921 ई0 में हड़प्पा एवं मोहन जोदड़ों की खुदाई से जो निष्कर्ष निकले उससे मानव समाज को यह ज्ञान हुआ कि ई0 पूर्व 2600 के लगभग प्राचीन भारत के उत्तरी पश्चिमी भाग एक विकसित सभ्यता थी जो अन्य प्राचीन सभ्यताओं से भी प्राचीन थी।

यह भारत वर्ष का गौरव रहा है कि पश्चिमी विश्व जब जंगली सभ्यता की आंचल में ढंका था तो एशिया के इस महाद्वीप में एक अत्यन्त विकासमान सभ्य लोग रहते थे। उनकी सभ्यता में धर्म का पक्ष अत्यन्त समून्नत था। एशिया की अन्य पुरातन समकालीन सभ्यताओं मिस्त्र, बाबुलोनियाँ आदि में धर्म का वह बहुविधिय स्वरूप हमें नहीं मिलता और न इतना वैज्ञानिक पैठ ही मिलता है जितना हड़प्पा की सभ्यता में। हड़प्पा धर्म में प्रकृति से लेकर देवत्व तक की यात्रा दिखती है। एक ओर जहाँ वृक्ष की पूजा देखी जाती है तो दूसरी ओर पशुपति शिव की मूर्ति की। देव मूर्तियों के अतिरिक्त दानवीय स्वरूपों का अंकन भी प्राप्त होता है। इस सभ्यता में अध्यात्म और कर्मकाण्ड दोनों साथ–साथ उभरे हैं। इस सभ्यता के प्रमुख धार्मिक स्वरूपों में शैव धर्म, वैष्णव धर्म, शक्ति सम्प्रदाय, वृक्ष पूजा एवं पशु पूजा है। जैन धर्म का प्रारम्भ भी इस युग में मिलता है। सिंधु घाटी की मूर्तियों में बैल की आकृतियाँ विशेष रूप से मिलती हैं। कृषम शब्द का अर्थ है– बैल। आदिनाथ जो जैन–धर्म के प्रवर्तक थे उनका चिन्ह बैल है, सिंधु घाटी से प्राप्त बैल की आकृति सूचक है कि उस समय जैन धर्म की स्थापना हो चुकी होगी। भारत का यह धर्म भारत–भूमि तक ही सीमित नहीं था बल्कि सुदूर लंका तक इसका प्रचार व प्रसार हुआ था। जैन–धर्म के चौबीस तीर्थकरों में भगवान महावीर का योगदान महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय है। महावीर के पूर्व पार्श्वनाथ का चात्र्याम रूप सामयिक धर्म प्रचलित था जिसको संशोधित एवं परिवर्तित कर महावीर ने पंचमहाव्रत धर्म को प्रचलित किया।

भारत भूमि पर ब्राह्मण धर्म के घोर कर्मकाण्ड की बलवती प्रतिक्रिया के रूप में बौद्ध धर्म का अम्युदय हुआ। बौद्ध धर्म ऐसे काल में उद्भूत हुआ जिसमें कर्मकाण्ड की विशाल दीवारें जर्जरित हो रही थी और अंधविश्वास के आधार पर संरोपित पुरातन मान्यताएं जीवन में निराशा भर रही थी। घोर निराशा एवं दुःखी जीवन को नयी रोशनी व मार्ग देने का संयोग बना एवं राजकुमार सिद्धार्थ जो कालांतर में बुद्ध कहलाएं उनके द्वारा बौद्ध धर्म की स्थापना हुई। काल की दृष्टि से जैन व बौद्ध, दोनों समकालीन व श्रमण–संस्कृति के स्तम्भ माने जाते हैं। बौद्ध धर्म का मूल संदेश मानव जाति को दुःखों के भंवर से निकालना है। स्वयं महात्मा बुद्ध के शब्दों में– जन्म भी दुःख है, जरा भी दुःख है, व्याधि भी दुःख है, मरण भी दुःख है, अप्रिय'मिलन भी दुःख है, प्रिय वियोग भी दुःख है। बुद्ध समस्त संसार की अनुभूतियों को दुःखमय मानते हैं। बौद्ध–धर्म में कहा गया है कि मानव पृथ्वी पर कोई ऐसा स्थान नहीं पा सकता जहाँ मृत्यु से बचा जा सके। समस्त मानव जाति को दुःखों से छुटकारा दिलाकर असीम आनंद की स्थिति में लाना बौद्ध धर्म का मूल मंत्र है। इसके लिए अत्यंत व्यवहारिक एवं आध्यात्मिक मार्ग बताएं गए हैं।

सिंधु घाटी की सभ्यता में प्रचलित धार्मिक क्रियाकलापों, उत्सव मनाने की प्रकृति, नृत्य, संगीत एवं चित्रांकन का प्रमाण प्राप्त मोहरों से मिलता है। यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि प्रागैतिहासिक काल से ही भारत नाना प्रकार के जातियों व सम्प्रदायों का आश्रय रहा है। भारतीय संस्कृति के विकास में आर्येत्तर जातियों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आर्य तथा आर्येत्तर सांस्कृतिक परम्पराओं का समन्वय भारतीय सभ्यता के निर्माण की आधारशीला सिद्ध हुई। प्रारम्भ में आर्यों का धर्म–कर्म बहुत ही सरल था किन्तु बाद में पुरोहितों की चेष्टाओं से थोड़ा जटिल हो गया। देवपूजा एवं पितृपजा ही वैदिक धर्म के मूल थे। उस काल में मूर्तियों के प्रमाण नहीं मिलते।

आर्यों ने अपने देवी देवताओं की कल्पना मानव के रूप में ही की थी। वे ऋत् के पोषक थे। ऋत् देवताओं का भी नियामक था। विष्णु ऋत का उद्गम था। मरूत का प्रादुर्भाव ऋत् से ही हुआ था तथा उषा ऋत् मार्ग का ही अनुगमन करती थी। आर्य एकेश्वर वाद के समर्थक थे। ऋग्वेद में कहा गया है– सत एक ही है। एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति। यद्यपि ऋग्वेद में बहुदेववाद व एकात्मवाद के प्रमाण भी मिलते हैं। वैदिक आर्यों का जीवन वेद आधारित था जिसके कुल चार वेदों की बात की गयी है– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद।

उत्तर वैदिक युग में धर्म में काफी अन्तर आ गया। देवो के भिन्न–भिन्न रूप सामने आने लगे। पुराने देवों की महत्ता घटी व नए देवों की महत्ता बढ़ी। इसी काल में रूद्र व शिव का समन्वय हुआ है। यज्ञों का प्रचलन बढ़ा तथा कर्मकाण्ड की जटिलता भी बढ़ती चली गयी। राजसूय, वाजपेय और अश्वमेद्य यज्ञ प्रधान यज्ञ हो गए। यज्ञों में पशुबलि की प्रथा बढ़ गयी व मंत्रों का महत्व भी बढ़ गया। कर्मकाण्ड के विकास के साथ–साथ पुरोहितों की संख्या महत्व व प्रभाव में काफी बढ़ोत्तरी हुई। षड़ दर्शनों का विकास भी इसी काल में हुआ। षड् दर्शनों में सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक पूर्व व उत्तर मीमांसा को माना जाता है जिसके प्रणेता क्रमशः महर्षि कपिल, पंतजलि, गौतम, कणाद व जैमिनी को माना गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि बौद्धिकता का चरम उत्कर्ष व विभिन्न दर्शनों का उद्‌य भी इसी काल में हुआ जो आज भी मानव–जाति को कल्याणमय एवं बौद्धिक जीवन की ओर ले जाने में सक्षम है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. प्राचीन भारत का राजनीति एवं सांस्कृति इतिहास– राधाकृष्ण चौधरी, भारती भवन इलाहाबाद।
2. प्राचीन भारतीय धर्म, शिव स्वरूप सहाय, मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी।
3. फाउण्डेशन ऑफ इण्डियन कल्चर गोविन्द चन्द्र रानाडे, नई दिल्ली।
4. जैन धर्म, पं0 कैलाश चन्द्र शास्त्री भारतीय दिगम्बर जैन, मथुरा।
5. तुलनात्मक धर्म–दर्शन, या0 मसीह मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी ।